

दीन-ए-ईलाही

दीन-ए-ईलाही (Din-i-Ilahi) अथवा तौहीद-ए-ईलाही की स्थापना धार्मिक क्षेत्र में अकबर का सबसे महत्वपूर्ण और विवादास्पद कार्य था। इबादतखाना बंद करवाने और महजर की घोषणा के बाद भी अकबर धार्मिक मामलों में अत्यधिक रूचि लेता था। अपने अनुभव, विद्वानों के विचारों से अकबर इस निर्णय पर पहुँचा कि सभी धर्मों का मूल तत्त्व एक ही है। भले ही लोगों के पास अलग-अलग भगवान् के नाम हैं पर सभी धर्म अदृश्य शक्ति की सार्वभौमिकता को ही स्वीकार करते हैं और उसकी कृपा से सांसारिक कष्टों से निवारण चाहते हैं।

अकबर की मंशा

दीन-ए-ईलाही (Din-i-Ilahi) को एक धर्म के रूप में पेश करने के पीछे अकबर की दो मंशाएँ थीं। पहला कि सभी जातियों और धार्मिक सम्प्रदाय के लोग एक सूत्र में बंध जाएँ जिससे उसके साम्राज्य में स्थिरता आये और सभी राजा और धर्म के प्रति एक ही दृष्टिकोण रखें। दूसरी मंशा यह थी कि अकबर खुद को राष्ट्रीय सम्राट के रूप में प्रतिष्ठित करवाना चाहता था। उसकी इच्छा थी कि प्रजा उसे भगवान् का प्रतिनिधि मान ले और विद्रोहात्मक रवैया त्याग दे। नए धर्म का उद्देश्य सभी धर्मों में समन्वय और एकता स्थापित करना भी था।

दीन-ए-ईलाही का निर्माण

1582 ई. में अकबर ने धार्मिक नेताओं, महत्वपूर्ण सरदारों और अन्य गण्यमान्य व्यक्तियों की सभा बुलाई और उनसे अनुरोध किया कि वे कोई ऐसा मार्ग निकालें जिससे साम्प्रदायिक भेदभाव को भूलकर सभी व्यक्ति शास्वत धर्म के सार्वभौम, सर्वमान्य आचरणयुक्त सिद्धांतों के अनुयायी बन सकें। फलतः अकबर ने 1582 ई. में तौहीद-ए-इलाही (दैवी एकेश्वरवाद) की घोषणा की जो बाद में दीन-ए-ईलाही (ईश्वर का धर्म) के नाम से विख्यात हुआ। सच तो यह है कि दीन-ए-ईलाही (Din-i-Ilahi) किसी प्रकार का धर्म नहीं था। यह एक ऐसा विचार था जिससे कुछ व्यक्तियों का समूह अकबर के विचारों से सहमत था और उसे अपना धर्म गुरु मानता था।

दीन-ए-ईलाही का स्वरूप

1. अकबर के धर्म का पालन करने वालों को निश्चित नियमों का पालन करना पड़ता था।
2. गुरु सर्वोच्च माना जाता था।
3. **दबिस्तान मजाहिब** में इस धर्म के पालन करने वालों के लिए दिशा-निर्देश दिए गए थे।
4. दीन-ए-ईलाही (Din-i-Ilahi) के अनुयायियों को यह स्वीकार करना पड़ता था कि ईश्वर एक है और उसका प्रतिनिधि अकबर है और वे उसके शिष्य हैं।
5. हर रविवार को अकबर अपने शिष्यों को दीक्षा देकर इस धर्म में प्रवेश करवाता था।
6. नए शिष्य को अकबर के सामने ही धर्म स्वीकार करना पड़ता था। इसके बदले अकबर उसे पगड़ी पहनाता था जिसपर "अल्लाह हो अकबर" लिखा होता था।
7. इस धर्म को स्वीकार करने वालों को अपने मूल धर्म को छोड़ने की अनिवार्यता नहीं थी।
8. नए धर्म के अवलम्बियों के लिए निरामिष होना जरूरी था।
9. दान आदि कर्मों पर विशेष बल दिया गया था।
10. सम्राट के प्रति श्रद्धा और भक्ति तथा अग्नि की पूजा अनिवार्य थी।
11. रजस्वला और गर्भवती स्त्रियों के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने पर भी पाबंदी थी।
12. दीन-ए-ईलाही (Din-i-Ilahi) में चार श्रेणी के अनुयायी थे। पहली श्रेणी में जो अनुयायी आते थे वे अकबर के लिए अपनी सम्पत्ति समर्पित करने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे। दूसरी श्रेणी में जो आते थे वे सम्पत्ति एवं अपना

जीवन अर्पण करने को भी तैयार रहते थे. तीसरी श्रेणी के अनुयायी धन और जीवन के साथ-साथ सम्राट के लिए अपनी संतान को भी निछावर करने को तैयार थे. अंतिम या चौथी श्रेणी में जो सदस्य थे वे अपना सब कुछ सम्राट के लिए अर्पण करने को तैयार रहते थे.

दीन-ए-ईलाही का प्रसार

अब प्रश्न उठता है कि दीन-ए-ईलाही को कितने लोगों ने स्वीकारा? दरअसल अकबर का यह धर्म अधिक व्यापक नहीं हो पाया. अकबर के जीवनकाल में ही इस धर्म को मानने वालों की संख्या कम थी. न हिन्दू ने और न मुसलमान ने इस धर्म को स्वीकारा. राज्य के 22 महत्त्वपूर्ण लोगों ने ही दीन-ए-ईलाही (Din-i-Ilahi) धर्म को स्वीकारा. इन 22 महत्त्वपूर्ण लोगों में बीरबल ही एकमात्र हिन्दू था जिसने दीन-ए-ईलाही को स्वीकारा. कट्टर मुसलमानों ने अकबर के द्वारा इस्लाम धर्म और प्रथाओं पर किये गए किए गए आघातों के कारण उसके इस नए धर्म को ठुकरा दिया. सूफी संत **शेख अहमद सरहिंदी** (Shaykh Ahmad Sirhindi) ने अकबर के इस धर्म का प्रबल विरोध किया. उसका मानना था कि अकबर का यह धर्म इस्लाम की अवमानना करने के बराबर है. नए धर्म के लोकप्रिय नहीं होने के पीछे अनेक कारण थे. एक कारण यह भी हो सकता है कि अकबर ने दीन-ए-ईलाही धर्म को स्वीकारने के लिए जनता को बाध्य नहीं किया. यह धर्म अकबर के इर्द-गिर्द सम्मानित लोगों में ही सिमटकर रह गया. अकबर की मृत्यु के बाद दीन-ए-ईलाही भी समाप्त हो गया.